

**Premchand**

**Julose**

**Chapter 1**

**DV**

पूर्ण स्वराज्य का जुलूस निकल रहा था। कुछ युवक, कुछ बूढ़े, कुछ बालक झंडियाँ और झंडे लिये

वन्दे मातरम् गाते हु माल के सामने से निकले। दोनों तरफ दर्शकों की दीवारें खड़ी थीं, मानो उन्हें इस जत्थे से कोई सरोकार नहीं है, मानो यह कोई तमाशा है और उनका काम केवल खड़े-खड़े देखना है।

शंभूनाथ ने दूकान की पटरी पर खड़े होकर अपने पड़ोसी दीनदयाल से कहा - सब के सब काल के मुँह में जा रहे हैं। आगे सवारों का दल मार-मार कर भगा देगा।

दीनदयाल ने कहा - महात्मा जी भी सठिया गये हैं। जुलूस निकालने से स्वराज्य मिल जाता, तो अब तक कब का मिल गया होता। और जुलूस में है कौन लोग, देखो - लौड़े, लफंगे सिर-फिरे। शहर का कोई बड़ा आदमी नहीं।

मैकू चट्टियों और स्लीपर्स की माला गरदन में लटकाये खड़ा था। इन दोनों सेठों की बातें सुनकर हँसा।

शंभू ने पूछा - क्यों हँसे मैकू ? आज रंग चोखा मालूम होता है।

मैकू -- हँसा इस बात पर जो तुमने कही कि कोई बड़ा आदमी जुलूस में नहीं है। बड़े आदमी क्यों जुलूस में आने लगे, उन्हें इस राज में कौन आराम नहीं है ? बँगलों और महलों में रहते हैं, मोटरों पर घूमते हैं, साहबों के साथ दावतें खाते हैं, कौन तकलीफ है ? मर तो हम लोग रहे हैं, जिन्हें रोटियों का ठिकाना नहीं। इस बखत कोई टेनिस खेलता होगा, कोई चाय पीता होगा, कोई ग्रामोफोन लिये गाना सुनता होगा, कोई पारिक की सैर करता होगा, यहाँ आये पुलिस के कोड़े खाने के लि ? तुमने भली कही।

शंभू --तुम यह बातें क्या समझोगे मैकू, जिस काम में चार बड़े आदमी अगुआ होते हैं, उसकी सरकार पर भी धाक बैठ जाती है। लफंगों-लौड़ों का गोल भला हाकिमों की निगाह

में क्या जँचेगा ?

मैकू ने सी दृष्टि से देखा जो कह रही थी -इन बातों के समझने का ठेका कुछ तुम्ही ने नहीं लिया है, और बोला-बड़े आदमी को तो हमीं लोग बनाते - बिगाड़ते हैं, या कोई और ? कितने ही लोग जिन्हें कोई पूछता भी न था, हमारे ही बनाये बड़े आदमी बन गये और अब मोटरों पर निकलते हैं और हमें नीच समझते हैं। यह लोगों की की तकदीर की खूबी है कि जिसकी जरा बढ़ती हुई और उसने हमसे आँखें फेरीं। हमारा बड़ा आदमी तो वही है, जो लँगोटी बाँधे नंगे पाँव घूमता है, जो हमारी दशा को सुधारने के लिये अपनी जान हथेली पर लिये फिरता है। और हमें किसी बड़े आदमी की परवाह नहीं है। सच पूछो तो इन आदमियों ने ही हमारी मिट्टी खराब कर रखी है। इन्हें सरकार ने कोई अच्छी जगह दे दी बस उसका दम भरने लगे।

दीनदयाल - नया दरोगा बड़ा जल्लाद है । चौरस्ते पर पहुँचते ही हंटर लेकर पिल पड़ेगा। फिर देखना, सब कैसे दुम दबाकर भागते हैं। मजा आयेगा।

जुलूस स्वाधीनता के नशे में चूर चौरस्ते पर पहुँचा तो देखा, आगे सवारों और सिपाहियों का क दस्ता रास्ता रोके खड़ा है।

सहसा दरोगा बीरबल सिंह घड़ा बढ़ा कर जुलूस के सामने आ गये और बोले-तुम लोगों को आगे जाने का हुक्म नहीं है।

जुलूस के बूढ़े नेता इब्राहिम अली ने आगे बढ़कर कहा - मैं आपको इतमीनान दिलाता हूँ,

किसी किस्म का दंगा फसाद न होगा। हम दूकान लूटने या मोटरें तोड़ने नहीं निकले हैं। हमारा मकसद इससे ऊँच है।

बीरबल-मुझे यह हुक्म मिला है कि जुलूस यहाँ से आगे न जाने पाये।

इब्राहिम- आप अपने अफसरों से जरा पूछ न लें !

बीरबल - मैं इसकी कोई जरूरत नहीं समझता।

इब्राहिम- तो हम लोग यहीं बैठते हैं। जब आप लोग चले जायेंगे तो हम निकल जायेंगे।

बीरबल-यहाँ खड़े होने का भी हुक्म नहीं है। तुमको वापस जाना पड़ेगा।

इब्राहिम ने गंभीर भाव से कहा- वापस तो हम न जायेंगे। आपको यह किसी को भी रोकने

का कोई हक नहीं है। आप अपने सवारों, संगीनों और बंदूकों के जोर से हमें रोकना चाहते हैं, रोक लीजिए; मगर आप हमें लौटा नहीं सकते। न जाने वह दिन कब आयेगा, जब हम ,हमारे भाईबन्दे से हुक्मों की तामील करने से साफ

इन्कार कर देंगे, जिनकी मंशा महज कौम को गुलामी की जंजीर में जकड़े रखना है।

बीरबल ग्रेजुट था। उसका बाप सुपरिन्टेन्डेंट पुलिस था। उसकी नस-नस में रौब भरा हुआ था। अफसरों की दृष्टि में उसका बड़ा सम्मान था। खासा गोरा-चिट्ठा नीली आँखें और भूरे बालों वाला तेजस्वी पुरुष था। शायद जिस वक्त कोट पहन कर ऊपर से हैट लगा लेता था तो भूल जाता था कि मैं भी यहीं का रहने वाला हूँ। शायद वह अपने को राज्य करने वाली जाति का अंग समझने लगता था ; मगर इब्राहिम के शब्द में जो तिरस्कार भरा हुआ उसने जरा देर के लिए उसे लज्जित कर दिया। पर मुआमला नाजुक था। जुलूस को रास्ता दे देता है, तो जवाब तलब हो जायगा, वहीं खड़ा रहने देता है, तो यह सब न जाने कब तक खड़े रहें। इस संकट में पड़ा हुआ था कि उसने डी० स० पी० को घोड़े पर आते देखा। अब सोच-विचार का समय न था। यह मौका था कार-गुजारी

दिखाने का। उसने कमर से बेटन निकाल लिया और घोड़े को ड़ लगा कर जुलूस पर चढ़ाने लगा। उसे देखते ही और सवारों ने भी घोड़ों को जुलूस पर चढ़ाना शुरू कर दिया। इब्राहिम दरोगा के घोड़े के सामने खड़ा था। उसके सिर पर क बेटन से जोर से पड़ा कि उसकी आँखें तिलमिला गयीं, खड़ा न रहा सका। सिर पकड़ कर बैठ गया। उसी वक्त दरोगा जी के घोड़े ने दोनों पाँव उठाये और जमीन पर बैठा हुआ इब्राहिम उसके टापों के नीचे आ गया। जुलूस अभी तक शान्त खड़ा था। इब्राहिम को गिरते देख कर कई आदमी उसे उठाने के लिए लपके, मगर कोई आगे न बढ़ सका। उधर सवारों के डंडे बड़ी निर्दयता से पड़ रहे थे। लोग हाथों पर डंडो को रोंकते थे और अविचलित रूप से खड़े थे। हिंसा के भावों में प्रवाहित न हो जाना उनके लिए प्रतिक्षण कठिन होता जाता था। जब

आघात और अपमान ही सहना है तो फिर हम भी इस दीवार को पार करने की क्यों न चेष्टा करें ? लोगों को ख्याल आया, शहर के लाखों आदमियों की निगाहें हमारी तरफ लगी हुई हैं। यहाँ से यह डंडा खाकर हम लौट जायें तो फिर किस मुँह से आजादी का नाम लेंगे ;मगर प्राणरक्षा के लि भागने का किसी को ध्यान भी न आता था ।यह पेट के भक्तों, किराये के टट्टुओं का दल न था । यह स्वाधीनता के सच्चे स्वयं सेवकों का आजादी के दीवानों का संगठित दल था - अपनी जिम्मेदारियों को खूब समझता था। कितनों ही के सिरों से खून जारी था, कितनों ही के हाथ जख्मी हो गये थे। क हल्ले में यह लोग सवारों की सफों को चीर सकते थे, मगर पैरों में बेड़ियाँ पड़ी थीं-सिद्धान्त की ,धर्म की, आदर्श की।

दस बारह मिनट तक यों ही डंडो की बौछार होती रही और लोग शान्त खड़े रहे।

इस मार-धाड़ की खबर क क्षण में बाजार में जा पहुँची। इब्राहीम घोड़े से कुचल गये, कई आदमी जख्मी हो गये, कई के हाथ टूट गये मगर न वे लोग पीछे फिरते हैं और न पुलिस उन्हें आगे जाने देती है।

मैकू ने उत्तेजित होकर कहा---अब तो भाई यहाँ नहीं रहा जाता। मैं भी चलता हूँ।

आदमी

दीनदयाल ने कहा-हम भी चलते हैं भाई, देखी जायगी।

शंभू क मिनट तक मौन खड़ा रहा काक उसने भी दुकान बढायी और बोला- क दिन तो मरना ही है, जो कुछ होना है, हो। आखिर वे लोग सभी के लि तो जान दे रहे हैं। देखते-देखते अधिकांश दुकानें बन्द हो गयीं। वह लोग जो दस मिनट पहले तमाशा देख रहे थे, इधर-उधर से दौड़

पड़े और हज़ारों आदमियों का विराट् दल घटनास्थल की ओर चला। यह उन्मत्त, हिंसामद से भरे हु मनुष्यों का समूह था, जिसे सिद्धान्त और आदर्श की परवाह न थी। जो करने के

लि ही नहीं मरने के लि भी तैयार थे ।कितनों ही के हाथों में लाठियाँ थीं, कितने ही जेबों में पत्थर भरे हु थे। न कोई किसी से कुछ बोलता था,न पूछता था। बस सब के सब मन में क दृढ़ संकल्प किये लपके चले जा रहे थे, मानों कोई घटा उमड़ी चली आती हो।

इस दल को दूर से देखते ही सवारों में कुछ हलचल पड़ी। बीरबल सिंह के चेहरे की हवाइयाँ उड़ने लगीं। डी० स० पी० ने अपनी मोटर आगे बढ़ायी । शान्ति और अहिंसा के व्रतधारियों पर डंडे बरसाना और बात थी, क उन्मत्त दल से मुकाबला करना दूसरी बात । सवार और सिपाही पीछे खिसक गये।

इब्राहीम की पीठ पर घोड़े ने टाप रख दी। वह अचेत जमीन पर पड़े थे। इन आदमियों का शोरगुल सुनकर आप ही आप उनकी आँखें खुल गयीं। क युवक को इशारे से बुला कर कहा-क्यों कैलाश, क्या कुछ लोग शहर से आ रहे हैं ?

कैलाश ने उस बढ़ती हुई घटा को देख कर कहा— जी हाँ, हजारों आदमी हैं।

इब्राहीम -तो अब खैरियत नहीं है। झंड़ा लौटा दो। हमें फौरन लौट चलना चाहि ;नहीं तूफान मच जागा। हमें अपने भाइयों से लड़ाई नहीं करनी है। फौरन लौट चलो।

यह कहते हु उन्होंने उठने की चेष्टा की मगर उठ न सके।

इशारे की देर थी। संगठित सेना की भाँति लोग हुक्म पाते ही पीछे फिर गये। झंडियों के

बाँसों, साफों और रूमलों से चटपट क स्ट्रेचर तैयार हो गया। इब्राहीम को लोगों ने उस पर लिटा दिया और पीछे फिरे ;मगर क्या वह परास्त हो गये थे ? अगर कुछ लोगों को उन्हें परास्त मानने में ही संतोष हो, तो हो, लेकिन वास्तव में उन्होंने क युगान्तरकारी विजय प्राप्त की थी । वे जानते थे, हमारा संघर्ष अपने भाइयों से है, जिनके हित परिस्थितियों के कारण हमारे हितों से भिन्न हैं। उनसे बैर नहीं करना है। फिर वह यह भी नहीं चाहते थे कि शहर में लूट और दंगे का बाजार गर्म हो जाय और हमारे धर्म-युद्ध का अन्त लूटी हुई दुकानें और टूटे हु सिर से हो। उनकी विजय का सबसे उज्ज्वल चिह्न यह था कि उन्होंने जनता की सहानुभूति प्राप्त कर ली थी, वहीं लोग जो पहले उन पर हँसते थे उनका धैर्य और साहस देखकर उनकी सहायता के लि निकल पड़े थे। मनोवृत्ति का यह

परिवर्तन ही हमारी असली विजय है। हमें किसी से लड़ाई करने की जरूरत नहीं हमारा उद्देश्य केवल जनता की सहानुभूति प्राप्त करना है, उनकी मनोवृत्तियों को बदल देना है। जिस दिन हम इस लक्ष्य पर पहुँच जायेंगे उसी दिन स्वराज्य-सूर्य उदय होगा।

तीन दिन गुजर गये थे। बीरबल सिंह अपने कमरे में बैठ चाय पी रहे थे और उनकी पत्नी मिट्ठन बाई शिशु को गोद में लि सामने खड़ी थीं।

बीरबल सिंह ने कहा - मैं क्या करता उस वक्त । पीछे डी० स० पी० खड़ा था। अगर उन्हें रास्ता दे देता, तो अपनी जान मुसीबत में फँसती।

मिट्ठन बाई ने सिर हिला कर कहा-तुम कम से कम इतना तो कर ही सकते थे कि उन पर डंडे न चलाने देते। तुम्हारा काम आदमियों पर डंडे चलाना है ? तुम ज्यादा से ज्यादा उन्हें रोक सकते थे । कल को तुम्हें अपराधियों को बेंत लगाने का काम दिया जा, तो शायद तुम्हें बड़ा आनन्द आयेगा, क्यों ?

बीरबल सिंह ने खिसिया कर कहा--तुम तो बात नहीं समझती हो।

मिट्ठन बाई- मैं खूब समझती हूँ। डी० स० पी० पीछे खड़ा था । तुमने सोचा होगा, 'सी कारगुजारी दिखाने का अवसर शायद फिर कभी मिले या न मिले। क्या समझते हो, उस दल में कोई भला आदमी न था ? उसमें कितने आदमी'से थे जो तुम्हारे जैसों को नौकर रख सकते हैं। विद्या में तो शायद अधिकांश तुमसे पढ़े हु होंगे, मगर तुम उन पर डंडे चला रहे थे,और उन्हें घोड़ो से कुचल रहे थे, वाह री जवाँमर्दी।

बीरबल ने बेहयाई की हँसी के साथ कहा - डी० स० पी० ने मेरा नाम नोट कर लिया है। सच !

दारोगा जी ने समझा था, यह सूचना देकर वह मिट्ठन बाई को खुश कर देंगे। सज्जनता

और भलमनसी आदि ऊपर की बातें हैं, दिल से नहीं जबान से कही जाती हैं। स्वार्थ दिल की गहराइयों में बैठा होता है। वही गम्भीर विचार का विषय है।

मगर मिट्ठन बाई के मुख पर हर्ष की कोई रेखा न नजर आयी, ऊपर की बातें शायद गहराइयों तक पहुँच गयी थीं। बोली- जरूर कर लिया होगा और शायद तुम्हें जल्द तरक्की भी मिल जा ; मगर बेगुनाहों के खून से हाथ रंगा कर तरक्की पायी , तो क्या पायी। यह तुम्हारी कारगुजारी

का इनाम नहीं तुम्हारे देशद्रोह की कीमत है। तुम्हारी कारगुजारी का इनाम तो तब मिलेगा, जब तुम किसी खूनी को खोज निकालोगे, किसी डूबते हुए आदमी को बचा लोगे।

काक क सिपाही ने बरामदे में खड़े होकर कहा —हुजूर, यह लिफाफा लाया हूँ। बीरबल सिंह ने बाहर निकल कर लिफाफा ले लिया और भीतर की सरकारी चिट्ठी निकाल कर पढ़ने लगे। पढ़कर उसे मेज पर रख दिया।

मिट्ठन ने पूछा-क्या तरक्की का परवाना आ गया ?

बीरबल सिंह ने झेंप कर कहा - तुम तो बनाती हो ! आज फिर कोई जुलूस निकलने वाला है। मुझे उसके साथ रहने का हुक्म हुआ है।

मिट्ठन - फिर तो तुम्हारी चाँदी है, तैयार हो जाओ। आज फिर वैसे ही शिकार मिलेंगे। खूब बढ़-बढ़कर हाथ

दिखाना। डी० स० पी० भी जरूर जायेंगे अब की तुम इन्सपेक्टर ही जाओगे। सच।

बीरबल सिंह ने माथा सिकोड़कर कहा - कभी-कभी तुम बे सिर पैर की बातें करने लगती हो। मान लो, मैं जाकर चुपचाप खड़ा रहूँ ,तो क्या नतीजा होगा। मैं नालायक समझा जाऊँगा। और मेरी जगह कोई दूसरा आदमी भेज दिया जायगा। कहीं शुबहा हो गया कि मुझे स्वराज्यवादियों से सहानुभूति है तो कहीं का न रहूँगा। अगर बर्खास्त न हुआ तो लैन की हाजिरी तो हो ही जायगी। आदमी जिस दुनिया में रहता है,उसी का चलन देखकर काम करता है। मैं बुद्धिमान् न सही ; पर इतना जानता हूँ कि ये लोग देश और जाति का उद्धार करने के लि ही कोशिश कर रहे हैं। यह भी जानता हूँ कि सरकार इस ख्याल को कुचल डालना चाहती है। ऐसा गधा नहीं हूँ कि गुलामी की जिन्दगी पर गर्व करूँ, लेकिन

परिस्थिति से मजबूर हूँ।

बाजे की आवाज कानों में आयी। बीरबल सिंह ने बाहर आकर पूछा। मालूम हुआ, स्वराज्य

वालों का जुलूस आ रहा है। चटपट वर्दी पहनी, साफा बाँधा और जेब में पिस्तौल रख कर बाहर आये । क क्षण में घोड़ा तैयार हो गया। कांस्टेबल पहले ही तैयार बैठे थे। सब लोग डबल मार्च करते हु जुलू की तरफ चले।

ये लोग डबल मार्च करते हु कोई पन्द्रह मिनट में जुलूस के सामने पहुँच गये। इन लोगों को देखते ही अगणित कंठों से 'वन्दे मातरम्' की क ध्वनि निकली, मानों मेघमंडल में गर्जन का शब्द हुआ हो फिर सन्नाटा छा गया । उस जुलूस में और इस जुलूस में कितना अंतर था। वह स्वराज्य के उत्सव का जुलूस था, यह क शहीद के मातम का। तीन दिन के भीषण ज्वर और वेदना के बाद आज उस जीवन का अन्त हो गया, जिसने कभी पद की लालसा नहीं की, कभी अधिकार के समाने सिर नहीं झुकाया । उन्होंने मरते समय वसीयत की थी कि मेरी लाश को गंगा में नहला कर दफन

किया जाय और मेरे मजार पर स्वराज्य का झंडा खड़ा किया जाय। उनके मरने का समाचार फैलते ही सारे शहर पर मातम का पर्दा-सा पड़ गया। जो सुनता था क बार इस तरह चौंक पड़ता था , जैसे उसे गोली लग गयी हो और तुरन्त उनके दर्शनों के लि भागता था। सारे बाजार बन्द हो गये,

इक्कों और ताँगों का कहीं पता न था, जैसे शहर लुट गया हो। देखते-देखते सारा शहर उमड़ पड़ा। जिस वक्त जनाजा उठा, लाख-सवा-लाख आदमी साथ थे। कोई आँखेसी न थी, जो आँसुओं से लाल न हो।

बीरबल सिंह अपने कांस्टेबलों और सवारों को पाँच-पाँच गज के फासले पर जुलूस के



साथ चलने का हुक्म देकर पीछे चले गये। पिछली सफों में कोई पचास गज तक महिलाँ थीं। दारोगा ने उनकी तरफ ताका। पहली ही कतार में मिट्ठन बाई नजर आयीं। बीरबल को विश्वास न आया। फिर ध्यान से देखा, वही थीं। मिट्ठन ने उसकी तरफ क बार देखा और आँखें फेर लीं, पर उसकी क चितवन में कुछेसा धिक्कार, कुछेसी लज्जा, कुछेसी व्यथा, कुछेसी घृणा भरी हुई थी कि बीरबल सिंह की देह में सिर से पाँव तक सनसनी-सी दौड़ गयी। वह अपनी दृष्टि में कभी इतने हल्के, इतने दुर्बल, इतने जलील न हु थे।

सहसा क युवती ने दारोगा जी की तरफ देखकर कहा - कोतवाल साहब, कहीं हम लोगों पर डंडे न चला दीजिगा। आपको देखकर भय हो रहा है।

दूसरी बोली- आप ही के कोई भाई तो थे, जिन्होंने उस दिन माल के चौराहे पर इस वीर पुरुष पर आघात किये थे।

तीसरी ने कहा-आपके कोई भाई न थे, आप खुद थे।

बीसियों के मुँहों से आवाज़ें निकलीं- अच्छा यह वही महाशय हैं ! महाशय, आपको नमस्कार है। यह आप ही की कृपा का फल है कि आज हम भी आपके डंडो के दर्शन के लि आ खड़ी हुई हैं।

बीरबल ने मिट्ठन बाई की ओर आँखों का भाला चलाया पर मुँह से कुछ न बोले।

क तीसरी महिला ने फिर कहा-हम क जलसा करके आपको जयमाला पहनायेंगे और आपका यशगान करेंगे।

चौथी ने कहा- आप बिल्कुल अंग्रेज मालूम होते हैं, जभी इतने गोरे हैं।

क बुढ़िया ने आँखें चढ़ाकर कहा- मेरी कोख में सा बालक जन्मा होता तो उसकी गरदन मरोड़ देती।

क युवती ने उसका तिरस्कार करके कहा- आप भी खूब कहती हैं, माता जी, कुत्ते तक तो नमक का हक अदा करते हैं, यह तो आदमी है।

बुढ़िया ने झल्ला कर कहा-पेट के गुलाम। हाय पेट ! हायपेट !

इस पर कई स्त्रियों ने बुढ़िया को आड़े हाथों लिया और वह बेचारी लज्जित होकर बोली-

अरे, मैं कुछ कहती थोड़े ही हूँ, मगर ऐसा आदमी भी क्या जो स्वार्थ के पीछे अंधा हो जाय।

बीरबल सिंह अब और न सुन सके। घोड़ा बढ़ाकर जुलूस में कई गज पीछे चले गये। मर्द लज्जित करता है, तो हमें क्रोध आता है; स्त्रियाँ लज्जित करती हैं, तो ग्लानि उत्पन्न होती है। बीरबल सिंह की इस वक्त इतनी हिम्मत न थी कि फिर उन महिलाओं के सामने जाते। अपने अफसरों पर क्रोध आया। मुझी को बार-बार क्यों इन कामों पर तैनात किया जाता है ? और लोग भी तो हैं, उन्हें क्यों नहीं लाया जाता ? क्या मैं सबसे गया बीता हूँ, क्या मैं ही सबसे भावशून्य हूँ ?

मिट्ठी इस वक्त मुझे दिल में कितना कायर और नीच समझ रही होगी। शायद इस वक्त मुझे कोई मार डाले, तो वह जबान भी न खोलेगी। शायद मन में प्रसन्न होगी कि अच्छा हुआ। अभी कोई जाकर साहब से कह दे कि बीरबल सिंह की स्त्री जुलूस में निकली थी, तो कहीं का न रहूँ। मिट्ठी जानती है, समझती है, फिर भी निकल खड़ी हुई। मुझसे पूछा तक नहीं। कोई फिक्र नहीं है न, जभी

ये बातें सूझती हैं। वहाँ सभी बेफिक्र हैं; कालेजों और स्कूलों के लड़के, मजदूर, पेशेवर उन्हें क्या चिन्ता। मरन तो हम लोगों का है, जिनके बाल-बच्चे हैं और मान-मर्यादा का ध्यान है। सबकी सब मेरी तरफ कैसा घूर रही थीं, मानों खा जायँगी।

जुलूस शहर की मुख्य सड़कों से गुजरता हुआ चला जा रहा था। दोनों ओर छतों पर, छज्जों पर, जँगलों पर, वृक्षों पर, दर्शकों की दीवारें सी खड़ी थीं। बीरबल सिंह को आज उनके चेहरे पर क नयी स्फूर्ति क नया उल्लास, क नया गर्व झलकता हुआ मालूम होता था। स्फूर्ति थी वृद्धों के चेहरों पर, उत्साह युवकों और गर्व रमणियों के। यह स्वराज्य के पथ पर चलने का उल्लास था। अब उनकी यात्रा का लक्ष्य अज्ञात न था, पथ-भ्रष्टों की भाँति इधर-उधर भटकना न था, दलितों की भाँति सिर झुका कर रोना न था। स्वाधीनता

का सुनहला शिखर सुदूर आकाश में चमक रहा था । ऐसा जान पड़ता था, लोगों को बीच के नालों और जंगलों की परवाह नहीं है, सब उस सुनहरे लक्ष्य पर पहुँचने के लिए उत्सुक हो रहे हैं।

ग्यारह बजते-बजते जुलूस नदी के किनारे आ पहुँचा, जनाजा उतारा गया और लोग शव को गंगा स्नान कराने के लिए चले। उसके शीतल, शांत, पीले मस्तक पर लाठी की चोट साफ नजर आ

रही थी। रक्त जमकर काला हो गया था। सिर के बड़े-बड़े बाल खून जम जाने से किसी चित्रकार की तूलिका की भाँति चिपक गये थे। कई हजार आदमी इस शहीद के अंतिम दर्शन के लिए मंडल बाँध कर खड़े हो गये थे। बीरबल सिंह पीछे घोड़े पर सवार खड़े थे। लाठी की चोट उन्हें भी नजर आयी। उनकी आत्मा ने जोर से धिक्कारा। वह शव की ओर न ताक सके। मुँह फेर लिया। जिस मनुष्य के दर्शनों के लिए, जिसके चरणों की रज मस्तक पर लगाने के लिए लाखों आदमी विकल हो रहे हैं, उसका मैंने इतना अपमान किया ! उनकी आत्मा इस समय स्वीकार कर रही थी कि निर्दय प्रहार में कर्तव्य के भाव का लेश भी न था - स्वार्थ था, कारगुजारी दिखाने की हवस और अफसरों को खुश करने की लिप्सा। हजारों आँखें क्रोध से भरी हुई उनकी ओर देख रही थीं ;पर वह सामने ताकने का साहस न कर सकते थे।

क कांस्टेबल ने आकर प्रशंसा की - हुजूर का हाथ गहरा पड़ा था। अभी तक खोपड़ी खुली है। सब की आँखें खुल गयीं।

बीरबल सिंह ने उपेक्षा की -मैं इसे अपनी जवाँमर्दी नहीं, अपना कमीनापन समझता हूँ।

कांस्टेबल ने फिर खुशामद की — बड़ा सरकश आदमी था हुजूर !

बीरबल ने फिर तीव्र भाव से कहा- चुप रहो ! जानते हो, सरकश किसे कहते हैं ?

सरकश वे कहलाते हैं, जो डाके मारते हैं, चोरी करते हैं, खून करते हैं ; उन्हें सरकश नहीं कहते, जो देश की भलाई के लिए अपनी जान हथेली पर लिफाफे में फिरते हों। हमारी बदनसीबी है कि जिनकी मदद करनी

चाहि उनका विरोध कर रहे हैं, यह घमंड करने और खुश होने की बात नहीं है, शर्म करने

और रोने की बात है।

स्नान समाप्त हुआ। जुलूस यहाँ से फिर रवाना हुआ।

शव को जब खाक में नीचे सुला कर लोग लौटने लगे तो दो बज रहे थे। मिट्टन बाई स्त्रियों के साथ-साथ कुछ दूर तक तो आयी ; पर क्वीन्स पार्क में आकर ठिठक गयी। घर जाने की इच्छा न हुई। वह जीर्ण, आहत, रक्तरंजित

शव, मानों उसके अन्तस्तल में बैठा उसे धिक्कार रहा था। पति से उसका मन इतना विरक्त हो गया था कि अब उसे धिक्कारने की भी उसकी इच्छा न थी। उसे स्वार्थी मनुष्य पर भय के सिवा और किसी चीज का असर हो सकता है, इसका उसे विश्वास ही न था।

वह बड़ी देर तक पार्क में घास पर बैठी सोचती रही ; पर अपने कर्तव्य का कुछ निश्चय न कर सकी। मैं नैहर जा सकती थी ; किन्तु वहाँ से महीने-दो-महीने में फिर इसी घर में आना पड़ेगा। नहीं मैं किसी की आश्रित न बनूंगी। क्या मैं अपने गुजर-बसर को नहीं कमा सकती ? उसने स्वयं भाँति-भाँति की कठिनाइयों की कल्पना की, पर आज उसकी आत्मा में न जाने इतना बल कहाँ से आ

गया था। इन कल्पनाओं का ध्यान में लाना ही उसे अपनी कमजोरी मालूम हुई।

सहसा उसे इब्राहीम अली की वृद्धा विधवा का ख्याल आया। उसने सुना था, कि उसके लड़के-बाले नहीं हैं। बेचारी अकेली बैठी रो रही होगी। कोई तसल्ली देने वाला पास न होगा। वह उसके मकान की ओर चली। पता उसने पहले ही अपने साथ की औरतों से पूछ लिया था। वह दिल में सोचती आती थी - मैं उनसे कैसे मिलूँगी, उनसे क्या कहूँगी उन्हें किन शब्दों में समझाऊँगी ? इन्हीं विचारों में डूबती हुई वह इब्राहीम अली के घर पहुँच गयी। मकान क गली में था, साफ सुथरा, लेकिन द्वार पर हसरत बरस रही थी। उसने धड़कते हु हृदय से अन्दर कदम रखा । सामने बरामदे में क खाट पर वह वृद्धा बैठी थी,

जिसके पति ने आज स्वाधीनता की वेदी पर अपना बलिदान किया

था। उसके समाने सादे कपड़े पहने हुए युवक खड़ा था, आँखों में आँसू भरे वृद्धा से कुछ बातें कर रहा था। मिट्ठन उस युवक को देख कर चौंक पड़ी- वह बीरबल सिंह थे। उसने क्रोधमय आश्चर्य से पूछा-तुम यहाँ कैसे आये ?

बीरबल सिंह ने कहा--उसी तरह जैसे तुम आयीं। अपने अपराध क्षमा कराने आया हूँ।

मिट्ठन के गोरे मुखड़े पर आज गर्व, उल्लास और प्रेम की जो उज्ज्वल विभूति नजर आयी,

वह अकथनीय थी। ऐसा जान पड़ा मानो उसके जन्म-जन्मांतर के क्लेश मिट गये हैं। वह चिंता और माया के बंधनों से मुक्त हो गयी है।